खण्ड–5, अंक–1, वर्ष–2017, मु0पृ0 73–79, D.O.I. : 10.22445/avsp.v5i01.9852 शोध पत्र

# वैद्यराज के रूप में गौतम बुद्ध–महावग्गपालि के विशेष सन्दर्भ में

दुर्गेश कुमार
असिस्टेंट प्रोफेसर, प्राचीन भारतीय इतिहास एवं पुरातत्व विभाग
डी0 ए0 वी0 पी0जी0 कॉलेज, लखनऊ–226004, उ0प्र0, भारत
drdkt14@gmail.com

प्राप्त तिथि–14.06.2017, स्वीकृत तिथि–10.08.2017

**सार–** गौतम बुद्ध के समय में जड़ी–बूटियों एवं प्राकृतिक भोज्य पदार्थों से रोगों का निदान प्रचलित था। बुद्ध जब अपने रोग ग्रस्त शिष्यों/भिक्षुओं के सम्पर्क में आए तब उन्होंने उनको धार्मिक उपदेश के माध्यम से निश्चित समय पर प्राकृतिक पौधों से तैयार किये विशेष प्रकार के भोजन को ग्रहण करने की सम्मति प्रदान की। बुद्ध ने वातव्याधियों हेतु वाष्प चिकित्सा की सलाह दी।

**बीज शब्द**– भेषज्य, वैद्यराज, घी, मक्खन, तेल, मधु, हल्दी, अदरक, काली मिर्च, तुलसी, आँवला, हींग, पाण्डुरोग, सामुद्रिक लवण, काला लवण।

## Gautama Buddha as a VaidyaRaj- with special reference to Mahavaggapali

Durgesh Kumar
Assistant Professor, Department of Ancient Indian History and Archaeology
D.A.V. P.G. College, Lucknow-226004, U.P., India
drdkt14@gmail.com

**Abstract**- Medicinal use of natural plants and food stuff was prevalent in Buddha Period. Buddha kaleen literature disclose that when ever Buddha came across to any of his ailing disciple/monk, he preached for taking certain type of food and drinks prepared from natural plants and vegetable. Steam bath was recommended for rheumatic troubles.

**Key words-** Bhesajya, Vaidyaraj, ghee, butter, oil, honey, turmeric, ginger, black pepper, basil, amla, asafetida, jaundice, sea-salt, black salt.

1. **प्रस्तावना–** मनुष्य ने अपनी उत्पत्ति के कुछ समय बाद ही शारीरिक कष्टों के निवारण हेतु स्वास्थ्यवर्द्धक एवं औषधीय गुणों से युक्त प्राकृतिक पदार्थों की खोज प्रारम्भ कर दी थी। भारत के प्राचीनतम ग्रन्थों से ही तत्कालीन चिकित्सीय विधियों एवं औषधियों का विवरण मिलता है। बुद्ध ने भी भिक्षुओं के अस्वस्थ होने पर उनकी अस्वस्थता का निदान करके इन रोगों के नाम, इनके उपचारार्थ औषधियों के नाम, उन औषधियों को बनाने एवं प्रयोग करने की विधियों को अपने धार्मिक उपदेश में परिणीत करते हुए, सांसारिक लोगों के कष्टों के निवारण हेतु व्यवस्थाएँ दीं और आवश्यकतानुसार अस्वस्थ भिक्षुओं को विभिन्न प्रकार की जड़ी–बूटियों एवं खाद्य पदार्थों को औषधि के रूप में ग्रहण करने की सम्मति प्रदान की, जिसका संकलन 'विनयपिटके महावग्गपालि', 'ललितविस्तर' एवं 'दीघनिकायपालि' में मुख्य रूप से मिलता है। भगवान् बुद्ध को अमृतरूपी भेषज्य देने वाला वैद्यराज कहा गया है।[1] एक बार जब वे श्रावस्ती में अनाथपिण्डिक के आराम जेतवन में विहार कर रहे थे, तो उन्होंने पाया कि कुछ भिक्षु शीतकालीन बीमारी (मलेरिया बुखार) से पीड़ित थे। उनको हल्का भोजन भी नहीं पचता था और खाया हुआ दूध–भात तक वमन हो जाता था,[2] जिसके कारण उनका शरीर पीला पड़ गया और वे अत्यन्त कृष्णकाय हो गए। उनके शरीर की नसें बाहर दिखने लगीं जिन्हें देखकर बुद्ध ने अपने प्रिय शिष्य आनन्द से भिक्षुओं के कृष्णकाय होने का कारण पूछा और तथ्य के द्वारा अवगत कराए जाने पर पाँच औषधीय गुण वाले पदार्थ घी, मक्खन, तेल, मधु और खाँड जो पुष्टाहार का भी काम करते हैं, तथा स्थूल आहार नहीं माने जाते हैं,[3] को भिक्षुओं को निर्धारित समय पर ग्रहण करने की सलाह दी। उपर्युक्त औषधियों के ग्रहण करने के उपरान्त भी जब भिक्षुओं के स्वास्थ्य में कोई सुधार नहीं हुआ, और वे अधिक पीले व दुबले–पतले हो गए[4] तो इसका कारण बुद्ध ने आनन्द से फिर पूछा, तब आनन्द ने बताया कि निर्धारित समय पर उपर्युक्त औषधीय पदार्थों को ग्रहण करने पर भी पचा नहीं पा रहे हैं, उनको उल्टी हो जा रही है। तब बुद्ध ने भिक्षुओं को धार्मिक उपदेश दिया और यह अनुमति दी कि वे अनिर्धारित समय पर भी उपर्युक्त औषधीय गुण वाले पदार्थों को ग्रहण कर सकते हैं।[5] वह विभिन्न व्याधियों के उपचार हेतु आवश्यकतानुसार विशिष्ट अवयवों के सावधानीपूर्वक प्रयोग का निर्धारण उपदेश के माध्यम से किया करते थे।

2. **जड़ी–बूटियों, चूर्ण–पाउडर, क्वाथ–काढ़ा, मलहम आदि से निर्मित औषधियों की उपयोगिता–** जिन भिक्षुओं को वसा(चर्बी) युक्त औषधि की आवश्यकता थी उन्हें बुद्ध ने रीछ, मछली, सुसुका(सोंस–बड़ी मछली), सुअर, गधे की चर्बी

मिलाकर, निर्धारित समय में लेकर, निर्धारित समय में पकाकर, निर्धारित समय पर ग्रहण करने की अनुमति दी। निर्धारित समय का उल्लंघन करना दुष्कृत्य का दोष बताया।[6] इसके साथ ही साथ जिन भिक्षुओं का रोग जड़वाली औषधि से ठीक होना सम्भव था उनके लिए जड़वाली औषधि जैसे– हल्दी, अदरक, वच, वचत्थ, अतीस, चिरायता(कुटकी), खस, नागरमोथा या ऐसी ही अन्य जड़वाली औषधियाँ जो भोजन के काम नहीं आती थीं, उनको भी औषधि के रूप में ग्रहण करने की सम्मति दी।[7] वहीं जिन जड़ों के चूर्ण/पाउडर बनाने की जरूरत थी, उनके लिए खरल–बट्टे का प्रयोग करने की अनुमति दी तथा इन जड़ों को भविष्य की आवश्यकता के लिए सुरक्षित रखने की भी सम्मति दी। लेकिन यदि किसी भिक्षु ने बिना आवश्यकता के उनको खाया तो वे दुष्कृत्य दोष के भागीदार होंगे।[8] जिन भिक्षुओं को क्वाथ(काढ़ा) के द्वारा स्वस्थ होना अपेक्षित था उनको बुद्ध ने नीम, कुटज, परवल, तुलसी, पिप्पली आदि जो अखाद्य–पदार्थों की श्रेणी में नहीं आते, को जीवन भर रखने तथा आवश्यकता होने पर ही सेवन करने की सलाह दी, किन्तु बिना आवश्यकता के सेवन करना दुष्कृत्य का दोषकारित बताया।[9] वर्तमान समय में भी गाँवों तथा पहाड़ों में भिन्न–भिन्न रोगों के उपचार हेतु प्राकृतिक वनस्पतियों का प्रयोग किया जाता है।

व्यवस्था के परिपेक्ष्य में जिन अस्वस्थ भिक्षुओं का उपचार फलों से अपेक्षित था, उनको भगवान् बुद्ध ने विडंग, पिप्पली, मिर्च, हर्रा, बहेरा, आँवला, गोष्ठफल तथा अन्य ऐसी ही फलवाली औषधियाँ लेने की सलाह दी, जो पाचन शक्ति को ठीक रखती हैं, जिनका वे आवश्यकतानुसार उपयोग कर सकते थे, किन्तु बिना आवश्यकता के उपयोग करना दुष्कृत्य का दोष समझा जाता था।[10] जिन अस्वस्थ भिक्षुओं के लिए गोंदवाली औषधि अपेक्षित थी, उनको बुद्ध ने हींग, हींग की गोंद, हींग की सिपाटिका, तकपत्ती, तकपर्णी, सज्जुकी गोंद तथा अन्य दूसरी भी गोंद वाली औषधि खाने की सलाह दी।[11] कालान्तर में जिन भिक्षुओं के रोग का उपचार लवण वाली औषधि से हो सकता था, बुद्ध ने उनको सामुद्रिक लवण, काला लवण, सेंधा लवण, वानस्पतिक लवण, विडाल(एक प्रकार का लवण) तथा अन्य कई दूसरे लवण जो कुछ औषधीय गुणों से परिपूर्ण हैं, ग्रहण करने की सलाह दी।[12] कुछ भिक्षुओं को दाद, खुजली, फोड़ा का रोग हो गया था जिनसे दुर्गन्ध आती थी। उनको बुद्ध ने पाउडर वाली औषधि तथा उसको बनाने, छानने के लिए चलनी, ओखल–मूसल के प्रयोग करने की सम्मति दी।[13] एक भिक्षु अमानवीय(भूत–प्रेत) रोग से ग्रसित था और सामान्य औषधियों का उस पर कोई प्रभाव नहीं पड़ रहा था। बुद्ध ने सूअर मारने के स्थान पर ले जाकर उसको कच्चा मांस खाने, कच्चा खून पीने की सलाह दी जिससे उसका यह भूत–प्रेत सम्बन्धी रोग ठीक हो गया।[14] इसी प्रकार जब एक भिक्षु को भूत ने पकड़ा, तो बुद्ध ने उसे अनाज(धान) जलाकर बनाए गए काढ़े को पिलाने की सलाह दी।[15]

महावग्ग में उल्लेख मिलता है कि एक भिक्षु आँख की बीमारी(नेत्र रोग) से ग्रसित था। उसको कुछ भिक्षु पेशाब–पाखाने के लिए ले जाया करते थे। वहाँ जाकर बुद्ध ने आँख रोग से ग्रसित उस भिक्षु के बारे में जानकारी प्राप्त की तथा उसे अंजन जैसे काला अंजन, रस अंजन, गेरू, काजल आदि प्रयोग करने की सलाह दी तथा उस अंजन को अंजनदानी में रखने की भी सलाह दी।[16] कुछ भिक्षु अंजन को सोने–चाँदी की अनेक प्रकार की अंजनदानियों में रखते थे, जिनकी चर्चा जन सामान्य में भी होने लगी। ऐसी स्थिति को देखकर बुद्ध ने नाना प्रकार की अंजनदानियों का प्रयोग करना दुष्कृत्य का दोष निर्धारित किया[17] और तदुपरान्त हाथी दाँत, हड्डी, सींग, नरकट, बाँस, काठ, लाख, सूखे फल, लोहे, शंख की अंजनदानियाँ रखने की सलाह दी तथा उन अंजनदानियों को ढकने और उनको थैलों, पेटिकाओं में भी रखने की सलाह दी।[18]

पिलिन्दवच्छ को सिर–दर्द था, तो भगवान् बुद्ध ने भिक्षुओं को सिर पर तेल मालिश करने की सम्मति दी, किन्तु जब कोई विशेष लाभ नहीं हुआ तो बुद्ध ने भिक्षुओं को नाक से औषधि लेने की सलाह दी तथा नसकरनी(नाक में रस डालने की नली) आदि के प्रयोग एवं उसके प्रकार को निर्धारित किया।[19] कुछ भिक्षु सोने एवं चाँदी की बनी नसकरनी का प्रयोग करते थे जिससे जनसामान्य में चर्चा होने लगी थी। तब बुद्ध ने अनेक प्रकार की नसकरनी का प्रयोग निषिद्ध कर दिया और शंख की नसकरनी का प्रयोग निर्धारित किया। जब इससे भी सिर–दर्द ठीक न हुआ तो औषधि के रूप में धुआँ पीने की सलाह दी।[20] उस समय षड्वर्गीय भिक्षु अनेक प्रकार के सोने–चाँदी के धूम्रनेत्र को धारण करते थे जिससे लोगों में असन्तोष उत्पन्न होने लगा। तब बुद्ध ने मात्र हड्डी, शंख के धूम्रनेत्र की अनुमति प्रदान की तथा धूम्रनेत्र को ढकने की सलाह दी क्योंकि बिना ढके धूम्रनेत्र प्रदूषित हो जाते थे।[21] पिलिन्दवच्छ घी, मक्खन, तेल, मधु, खाँड़ इन पंच औषधियों को ग्रहण करने के आदी हो गए थे। इनको ग्रहण करने के पश्चात् शेष पंच औषधि ये अपने सहायक भिक्षुओं में बाँट देते थे, जिससे भिक्षुगण पर्याप्त मात्रा में इनको एकत्र करके रखने लगे, जिसे देखकर लोग हैरान हो गए।[22] जब ये तथ्य मगधराज सेणिय बिम्बिसार के संज्ञान में आया तो वे भी हैरान हो गए कि अल्प इच्छा रखने वाले भिक्षु, संग्रह करने वाले कैसे हो गए और उन्होंने इस तथ्य से बुद्ध को अवगत कराया, जिस पर बुद्ध ने भिक्षुओं को फटकारते हुए धार्मिक उपदेश दिया कि रोगी भिक्षुओं को खाने लायक औषधि, जिसमें घी, मक्खन, तेल, मधु, खाँड आदि हैं, को अधिकतम एक सप्ताह रखकर ही सेवन करना चाहिए और चेतावनी दी इसका उल्लंघन करने वाले भिक्षु दण्ड के भागी होंगे।[23]

एक अन्य उल्लेख भी मिलता है कि पिलिन्दवच्छ, पेट में वात रोग से पीड़ित थे। वैद्य तेल पकाने को कहते थे। बुद्ध ने भिक्षुओं को तेल पकाने की अनुमति दी। उस समय तेल–पाक में मद्य डालकर पकाया जाता था जिससे भिक्षु नशे से मतवाले हो जाते थे। अतः बुद्ध ने अधिक मद्ययुक्त पाक(काढ़ा) निषिद्ध कर दिया और (पाक में उतना ही मद्य मिश्रित

करने की अनुमति दी जिससे पाक में) उस मद्य का रंग, गंध स्वाद न जान पड़े। अधिक मद्य जो बचा था, उससे मालिश करने को कहा,[24] किन्तु जब उपर्युक्त विधि से भी लाभ न हुआ तो बुद्ध ने स्वेदकर्म (भाप देकर पसीना निकालने की चिकित्सा) की सलाह दी। किन्तु इस पर भी लाभ न होने पर बुद्ध ने भिक्षुओं को सम्भारस्वेद (अनेक प्रकार के वात रोगों को दूर करने वाले पत्तों के बीच लेटकर पसीना निकालने की विधि) की सलाह दी। इसके पश्चात् भी रोग का उपचार न होने पर बुद्ध ने महास्वेद (पोरसाभर गहरा गड्ढा खोदकर उसे अंगार से भरकर फिर गड्ढे को मिट्टी, बालू से ढककर उस पर अनेक प्रकार के वात रोगों को दूर करने वाले पत्तों को बिछाकर, शरीर में तेल लगाकर उस पर लेटकर पसीना निकालने की विधि) की सलाह दी।[25] एक भिक्षु के पेट में गैस की बीमारी हो गई। जब उसे नमक मिलाकर छाछ दिया गया तो रोग शांत हो गया। इस पर बुद्ध ने भिक्षुओं को छाछ पीने की अनुमति प्रदान की।[26] इसके साथ ही साथ औषधि द्वारा गठिया रोग के उपचार के लिए बुद्ध ने औषधियुक्त गर्म जल से स्नान करने की सलाह दी। एक बार पिलिन्दवच्छ को मियादी बुखार हो गया तो बुद्ध ने सींग से खून निकालने की सलाह दी। इसी प्रकार पिलिन्दवच्छ के पैर में छाला(फफोला) पड़ने पर बुद्ध ने मलहम लगाने एवं यात्रा से आने वाले भिक्षुओं को पैर धोने की सलाह दी।[27]

3. **शल्य चिकित्सा की विधियां–** विनयपिटके महावग्गपालि में उल्लेख मिलता है कि उस समय कुछ भिक्षुओं को व्रण(फोड़े) का रोग हो गया था, जिसके उपचार हेतु बुद्ध ने उसके चीड़–फाड़ की सलाह दी तथा जिन भिक्षुओं के घाव ठीक नहीं हो रहे थे, उनको घाव पर तेल, मलहम लगाने तथा पट्टी बाँधने की सलाह दी। दस्तरोग से पीड़ित कुछ भिक्षुओं को जब दस्त रोकने की आवश्यकता थी, तो बुद्ध ने उन्हें जड़ी–बूटियों का क्वाथ(काढ़ा) पीने की सलाह दी।[28] जब कुछ भिक्षुओं को साँप ने काटा था तो बुद्ध ने उनको चार महाविकट(गोबर, मूत्र, राख, और मिट्टी) खाने की सलाह दी। इसी प्रकार तब एक भिक्षु ने विष खा लिया तो बुद्ध ने उसे गोबर का काढ़ा पिलाने की सलाह दी।[29] यहाँ यह बात ध्यान देने योग्य है कि विष से पीड़ित व्यक्ति को गाय का पंचगव्य(घी, दूध, दही, मूत्र और गोबर) दिया जाना पाथेय है, किन्तु जब कुछ भिक्षु घरदिन्नक(वशीकरण) रोग से पीड़ित हुए थे, तो बुद्ध ने उन्हें हल से जुती हुई मिट्टी अर्थात खेत की मिट्टी का काढ़ा पिलाने की सलाह दी।[30] एक भिक्षु को पाण्डुरोग(पीलिया) हो गया था। बुद्ध ने उसे हर्र मिलाकर गौ–मूत्र पीने की सलाह दी। जब एक भिक्षु को चर्म रोग हो गया, तो बुद्ध ने उसे गंधक का लेप लगाने की सलाह दी।[31] एक उल्लेख मिलता है कि एक भिक्षु का शरीर सुन्न हो गया था। बुद्ध ने उसे जुलाब पीने की सलाह दी।[32] एक भिक्षु को शुद्ध किए हुए माँड के प्राकृतिक व कृत्रिम रस तथा माँस के रस की आवश्यकता थी। बुद्ध ने उसे ग्रहण करने की अनुमति प्रदान की।[33] एक भिक्षु बीमार था, उसे औषधि के रूप में माँस की आवश्यकता थी। पका हुआ माँस उस दिन वाराणसी में उपलब्ध न होने के कारण, सुप्रिया नाम की उपासिका ने अपनी जांघ का माँस काटकर उसे पकवाकर उस भिक्षु के पास भेज दिया था; सुप्रिय नामक उपासक यह समाचार सुनकर बहुत खुश हुआ और बुद्ध को बताया; और बुद्ध को भिक्षुगण के साथ भोजन पर आमन्त्रित किया।[34] जब बुद्ध सुप्रिया के घर पर भोजन हेतु आए तब उन्होंने सुप्रिया के बारे में पूछा, और यह जानकर कि वह अस्वस्थ है, उसी अवस्था में सुप्रिया को अपने सामने लाने का आदेश दिया। बुद्ध के दर्शनमात्र से ही सुप्रिया का घाव बिल्कुल ठीक हो गया। तब बुद्ध ने वहाँ उपस्थित भिक्षुओं से पूछा कि किसने सुप्रिया उपासिका से माँस माँगा था और यह भी कहा कि क्या तुमने यह जानने का प्रयास किया कि यह किसका माँस है। बुद्ध ने उसे फटकारते हुए कहा कि तुमने मनुष्य का माँस खाया है। तदुपरान्त बुद्ध ने मनुष्य का माँस को औषधि के रूप में खाना वर्जित कर दिया।[35] इसी प्रकार बुद्ध ने हाथी का माँस, घोड़े, कुत्ते, साँप, सिंह, बाघ, चीता, भालू, लकड़बग्घा आदि, जो दुर्भिक्ष के कारण लोगों द्वारा मारकर खाए जाते थे और भिक्षुओं को भी वही माँस लोग भिक्षा में भी देते थे, को भी बुद्ध ने भिक्षुओं द्वारा खाया जाना निषिद्ध कर दिया।[36]

बुद्ध ने भिक्षुओं के लिए घर के भीतर भोज्य पदार्थ रखना(संग्रह करना), पकाना और स्वयं पकाकर खाना निषिद्ध किया था। इसका उल्लंघन करने वाला दुष्कृत्य का दोषी माना जाता था,[37] लेकिन दुर्भिक्ष(अकाल) में बुद्ध ने भिक्षुओं को आराम गाह में भोज्य पदार्थ रखना, पकाना तथा स्वयं पकाकर भोजन को खाने की अनुमति दी थी।[38] एक बार जब कई भिक्षु काशी में वर्षाकाल व्यतीत कर राजगृह जा रहे थे, तो रास्ते में उन्हें किसी तरह का भोजन उपलब्ध न हो सका। रास्ते में प्रचुर मात्रा में फल उपलब्ध थे, लेकिन उन फलों को भिक्षुओं को खाने के लिए देने वाला कोई न था,[39] जिससे भिक्षुओं ने फल को ग्रहण नहीं किया और भूखे रहे। इस कष्ट को भिक्षुओं ने राजगृह पहुँचकर बुद्ध से बताया, तो बुद्ध ने उस सम्बन्ध में धार्मिक उपदेश देते हुए अनुमति दी कि जहाँ पर खाने योग्य फल हों और कोई उन्हें तोड़कर देने वाला न हो, तो तीव्र क्षुधा की स्थिति में भिक्षु स्वयं तोड़कर खा सकता है और यदि कोई देने वाला हो, तो उससे प्राप्त करके ही खा सकता है।[40] कमल की जड़, भसींड़ और कमल की नाल के खाने से ज्वर का रोग ठीक हो जाता है। यह दृष्टान्त आया है कि जब बुद्ध श्रावस्ती में अनाथपिण्डिक के जेतवन विश्रामालय में विहार कर रहे थे,[41] उस समय सारिपुत्र को ज्वर रोग हो गया था। तब महामौद्गल्यायन ने शीघ्रता से मंदाकिनी झील से कमल की जड़, कमल की नाल उनको खिलाया, जिससे ज्वर रोग शान्त हो गया।[42]

महावग्ग[43] में उल्लेख है कि बुद्ध ने गुह्य स्थान के चारों ओर चीड़–फाड़ को वर्जित किया। ऐसा दृष्टान्त मिलता है कि जब बुद्ध श्रावस्ती में विहार कर रहे थे, तो उस समय एक भिक्षु भगंदर रोग से पीड़ित था। आकाशगोत्र नामक वैद्य

उसको शल्यक्रिया द्वारा ठीक करने का प्रयास कर रहा था। उसी समय बुद्ध वहाँ पहुँचे, तो उसने कहा कि इस भिक्षु के गुदा(मलमार्ग) को देखें। ये जैसे गोह का मुख हो गया है। बुद्ध ने इस सम्बन्ध में अन्य भिक्षुओं से जानकारी प्राप्त की। जब उन्हें ज्ञात हुआ कि आकाशगोत्र द्वारा शल्यक्रिया द्वारा चिकित्सा की जा रही है, तो बुद्ध ने गुदा जैसे गुप्तांग की शल्यक्रिया निषिद्ध कर दी और धार्मिक उपदेश देते हुए कहा कि गुह्य स्थान के चारों ओर दो अंगुल तक शल्यक्रिया किया जाना वर्जित है। जो ऐसा करेगा, वह थुल्लच्चय अर्थात् गंभीर अपराध का दोषी होगा।[44] बुद्ध ने भिक्षुओं को खिचड़ी, यावगू, खीर तथा लड्डू खाने की अनुमति प्रदान की थी। खिचड़ी–यावगू, खीर के दस गुण बतलाए[45] और कहा कि इसको लेने वाले में आयु, रूप, सुख, बल, बुद्धि की वृद्धि होती है। यह भूख, क्षुधा, प्यास को दूर करता है, वायु(गैस) को नियन्त्रित करता है, पेट को साफ करता है और पाचन क्रिया को ठीक रखता है। बुद्ध ने औषधि के रूप में इनकी प्रशंसा की है।[46] इसके साथ ही साथ बुद्ध ने बीमार भिक्षुओं को गुड़ तथा स्वस्थ भिक्षुओं को गुड़ का रस ग्रहण करने की अनुमति दी थी।[47] महावग्ग में उल्लेख है कि हल्दी, अदरक,[48] प्याज,[49] लहसुन[50] आदि जड़ें(कन्द) तथा इनका काढ़ा ज्वर, अजीर्ण, पेट दर्द, खाँसी, गठिया रोग में एवं खस–खस, भद्रमुञ्जा[51] आदि घासों के क्वाथ(पाउडर) को औषधि के रूप में ग्रहण करना ज्वर रोग में लाभकारी होता है। बुद्ध ने भिक्षुओं को 12 फलों के बीजों को औषधि के रूप में ग्रहण करने की सम्मति दी किन्तु उन्होंने बेल के बीज को खाने से मना कर किया क्योंकि इससे पित्ताशय और गुर्दे में पथरी हो सकती है।[52] एक विचार के अनुसार बुद्ध ने चार आर्य सत्य का सूत्र आयुर्विज्ञान से ग्रहण किया था।[53] व्याधिसूत्र में चार आर्य सत्यों की तुलना उनके प्रतिरूप–रोग, निदान, उपचार एवं औषधि से की गई है।[54]

4. **निष्कर्ष–** अतः उपर्युक्त विवेचन के आधार पर यह कहा जा सकता है कि बुद्ध को विभिन्न रोगों के निदान एवं उपचार हेतु प्रयुक्त होने वाली औषधियों एवं चिकित्सीय विधियों की गहन जानकारी थी। विभिन्न प्रकार के रोगों से ग्रसित भिक्षुओं के रोग निदान एवं उपचार हेतु बुद्ध ध्यान मग्न होकर उनको धार्मिक उपदेश देते हुए औषधियों का निर्धारण करते थे तथा ये भी सचेत करते थे कि आवश्यकता से अधिक औषधि भी रखना या खाना दुष्कृत्य की श्रेणी में आता है, क्योंकि उन्हें इन औषधीय पदार्थों के दुष्प्रभावों का भी ज्ञान था। इसके अतिरिक्त मद्य, माँस जैसे निषिद्ध पदार्थों के औषधीय गुणों के कारण उन्होंने कुछ विशिष्ट रोगों के उपचार हेतु इनके औषधि के रूप में सेवन करने की अनुमति दी थी। भिक्षुओं को स्वस्थ रखने के लिए उन्होंने औषधि, आचार–विचार, व्यवहार, भोजन, निवास तथा वस्त्र आदि का निर्धारण किया तथा भिक्षुओं को किसी भी अवस्था में किसी भी वस्तु में आशक्त होने का निषेध भी किया।

**सन्दर्भ**


1. शास्त्री शान्ति भिक्षु(1992)(अनु0) ललितविस्तर, द्वितीय संस्करण, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ, अध्याय– 1, पृ0 11।
2. डेविड्स, टी0 डब्ल्यू0 रीज एण्ड ओल्डेनवर्ग, हर्मन, विनय टेक्स्ट्स पार्ट–II, द्रष्टव्य, मैक्समूलर एफ0(1974) (सं0), सेक्रड बुक्स ऑफ् दी ईस्ट, वाल्यूम– 17, पुनर्मुदित, मोतीलाल बनारसीदास, पृ0 41; कस्सपो भिक्खु जगदीस(1980) पधानंसंसाधको, विनयपिटके महावग्गपालि, नव–नालन्दा–महाविहारेन, पुनप्पकासिता, पृ0 218 : तेन समयेन बुद्धो भगवा सावत्थियं विहरति जेतवने अनाथपिण्डिकस्य आरामे। तेन खो समयेन भिक्खूनं सारदिकेन आबाधेन फुट्ठानं यागु पि पीता उग्गच्छति, भत्तं पि भुत्तं उग्गच्छति।
3. डेविड्स टी0 डब्ल्यू0 रीज एण्ड ओल्डेनवर्ग हर्मन, विनय टेक्स्ट्स पार्ट–II, द्रष्टव्य, मैक्समूलर एफ0, पूर्वोद्धत, पृ0 41; विनयपिटके महावग्गपालि, पूर्वोद्धत, पृ0 218 : "किं नु खो, आनन्द, एतरहि भिक्खू किसा, ल्खा, दुब्बण्णा, उप्पण्डुप्पण्डुकजाता, धमनिसन्थतगत्ता"....." इमानि खो पञ्च भेसज्जानि, सेय्यथीदं–सप्ति, नवनीतं, तेल, मधु, फाणितं; भेसज्जानि चेव भेसज्जसम्मतानि च लोकस्य, आहारत्थञ्च फरन्ति, न च ओळारिको आहारो पञ्ञायति। यन्नाहं भिक्खूनं इमानि पञ्च भेसज्जानि अनुजानेय्यं काले पटिग्गहेत्वा काले परिभुञ्जितुं।"
4. डेविड्स टी0 डब्ल्यू0 रीज एण्ड ओल्डेनवर्ग हर्मन, विनय टेक्स्ट्स पार्ट–II, द्रष्टव्य, मैक्समूलर एफ0, पूर्वोद्धत, मु0पृ0 41–42।
5. उपरिलिखित, मु0पृ0 42–43।
6. उपरिलिखित, पृ0 43–44; विनयपिटके महावग्गपालि, पूर्वोद्धत, पृ0 219 : अनुजानामि, भिक्खवे, वसानि भेसज्जानि–अच्छवसं, मच्छवसं, सुसुकावसं, सूकरवसं, गद्रभवसं–~ काले पटिग्गहितं काले निप्पक्कं काले संसट्ठं, तेल परिभोगेन परिभुञ्जितुं। विकाले चे, भिक्खवे, पटिग्गहितं विकाले निप्पक्कं विकाले संसट्ठं, तं चे परिभुञ्जेय्य, आपत्ति तिण्णं दुक्कटानं।
7. डेविड्स, टी0 डब्ल्यू0 रीज एण्ड ओल्डेनवर्ग हर्मन, विनय टेक्स्ट्स पार्ट–II, द्रष्टव्य, मैक्समूलर एफ0, पूर्वोद्धत, पृ0 44–46; विनयपिटके महावग्गपालि, पूर्वोद्धत, पृ0 219 : मूलानि भेसज्जानि–हलिद्दिं, सिङ्गिवेरं, वचं, वचत्थं, अतिविसं, कटुकरोहिणिं, उसीरं, भद्दमुत्तकं, यानि वा पनञ्ञानि पि अत्थि मूलानि भेसज्जानि नेव खादनीये खादनीयत्थं फरन्ति, न भोजनीये भोजनीयत्थं फरन्ति, तानि–पाटिग्गहेत्वा यावजीवं परिहरितुं; सति पच्चये परिभुञ्जितुं। असति पच्चये परिभुञ्जन्तस्स आपत्ति पुक्कटस्सा ति।..... अनुजानामि, भिक्खवे, निसदं निसदपोतकं ति।
8. उपरिलिखित।
9. डेविड्स, टी0 डब्ल्यू0 रीज एण्ड ओल्डेनवर्ग, हर्मन, विनय टेक्स्ट्स पार्ट–II, द्रष्टव्य, मैक्समूलर एफ0, पूर्वोद्धत, पृ0 45–46; विनयपिटके महावग्गपालि, पूर्वोद्धत, पृ0 220 : भिक्खवे, कसावनि भेसज्जानि–निम्बकसावं, कुटजकसावं,

पटोलकसावं, पग्गवकसावं, नत्तमालकसावं, यानि व पनञ्ञानि पि अत्थि कसावभेसज्जानि नेव खादनीये खादनीयत्थं फरन्ति, न भोजनीये भोजनीयत्थं फरन्ति,.....असति पच्चये परिभुञ्जन्तस्य आपत्ति दुक्कटस्सा ति।

10. डेविड्स, टी0 डब्ल्यू0 रीज एण्ड ओल्डेनवर्ग, हर्मन, विनय टेक्स्ट्स पार्ट–II, द्रष्टव्य, मैक्समूलर एफ0, पूर्वोद्धत, पृ0 46–47; विनयपिटके महावग्गपालि, पूर्वोद्धत, पृ0 220 : अनुजानामि, भिक्खवे, फलानि–भेसज्जानि विलङ्ग, पिप्पलिं, मरिचं हरीतकं, विभीतकं, आमलकं, गोट्ठफलं, यानि वा पनञ्ञानि पि अत्थि फलानि भेसज्जानि, नेव खादनीये खादनीयत्थं फरन्ति, न भोजनीये भोजनीयत्थं फरन्ति.....पे0.....।

11. डेविड्स, टी0 डब्ल्यू0 रीज एण्ड ओल्डेनवर्ग, हर्मन, विनय टेक्स्ट्स पार्ट–II, द्रष्टव्य, मैक्समूलर एफ0, पूर्वोद्धत, पृ0 47; विनयपिटके महावग्गपालि, पूर्वोद्धत, पृ0 220 : भिक्खवे जतूनि भेसज्जानि–हिङ्गु, हिङ्गु, जतुं, हिङ्गुसिपाटिकं तकं, तकपत्तिं, तकपण्णिं, सज्जुलसं, यानि वा पनञ्ञानि पि अत्थि जतूनि भेसज्जानि, नेव खादनीये खादनीयत्थं फरन्ति।

12. डेविड्स टी0डब्ल्यू0 रीज एण्ड ओल्डेनवर्ग हर्मन, विनय टेक्स्ट्स पार्ट–II, द्रष्टव्य, मैक्समूलर एफ0, पूर्वोद्धत, पृ0 47–48; विनयपिटके महावग्गपालि, पूर्वोद्धत, पृ0 220 : भिक्खवे, लोणानि भेसज्जानि सामुद्दं, काळलोणं, सिन्धवं, उब्भिदं, बिल, यानि वा पनञ्ञानि पि अत्थि लोणानि भेसज्जानि, नेव खादनीये खादनीयत्थ फरन्ति, न भोजनीये भोजनीयत्थं फरन्ति, तानि–पटिग्गहेत्वा यावजीवं परिहरितु; सतिपच्चये परिभुञ्जितुं।

13. डेविड्स, टी0 डब्ल्यू0 रीज एण्ड ओल्डेनवर्ग, हर्मन, विनय टेक्स्ट्स पार्ट–II, द्रष्टव्य, मैक्समूलर एफ0, पूर्वोद्धत, पृ0 48–49; विनयपिटके महावग्गपालि, पूर्वोद्धत, पृ0 221 : "अनुजानामि, भिक्खवे, यस्य कुण्ड वा, पिळका वा, अस्सावो वा, थल्लुकच्छु वा अबाधो, कायो वा दुग्गन्धो, चुण्णानि भेसज्जानि; अगिलानस्स छकणं मत्तिकं रजननिप्पक्का अनुजानामि, भिक्खवे, उदुक्खलं मुसलं" ..... चुण्णचालिनिं ति।

14. डेविड्स टी0 डब्ल्यू0 रीज एण्ड ओल्डेनवर्ग हर्मन, विनय टेक्स्ट्स पार्ट–II, द्रष्टव्य, मैक्समूलर एफ0, पूर्वोद्धत, पृ0 49; विनयपिटके महावग्गपालि, पूर्वोद्धत, पृ0 221 : तेन खो पन समयेन अञ्ञतरस्य भिक्खुनो अमनुस्सिकाबाधो होति। तं आचरियुपज्झाया उपट्ठहन्ता नासक्खिंसु अरोगं कातुं। सो सूकरसूनं गन्त्वा आमकमंसं खादि, आमकलोहितं पिवि तस्य सो अमनुस्सिकाबाधो पटिप्पस्सम्भि।

15. डेविड्स, टी0 डब्ल्यू0 रीज एण्ड ओल्डेनवर्ग, हर्मन, विनय टेक्स्ट्स पार्ट–II, द्रष्टव्य, मैक्समूलर एफ0, पूर्वोद्धत, पृ0 60; विनयपिटके महावग्गपालि, पूर्वोद्धत, पृ0 225 : तेन खो पन समयेन अञ्ञतरो भिक्खु दुट्ठगहणिको होति। भगवतो एतमत्थं आरोचेसुं। अनुजानामि, भिक्खवे, आमिसखारं पायेतुं ति।

16. डेविड्स, टी0 डब्ल्यू0 रीज एण्ड ओल्डेनवर्ग, हर्मन, विनय टेक्स्ट्स पार्ट–II, द्रष्टव्य, मैक्समूलर एफ0, पूर्वोद्धत, पृ0 50–51; विनयपिटके महावग्गपालि, पूर्वोद्धत, पृ0 221 : तेन खो पन समयेन अञ्ञतरस्स भिक्खुनो चक्खुरोगाबाधो होति। तं भिक्खू परिग्गहेत्वा उच्चारं पि पस्सावं पि निक्खामेन्ति। अद्दसा खो भगवा सेनासनचारिकं आहिण्डन्तो ते भिक्खू तं भिक्खु परिग्गहेत्वा उच्चारं पि पस्सावं पि निक्टवामेन्ते, दिस्वान येन ते भिक्खू तेनुपसङ्कमि, उपसङ्कमित्वा ते भिक्खू एतदवोच– "किं इमस्स, भिक्खवे, भिक्खुनो आबाधो" ति? इमस्य, भन्ते, आयस्मतो चक्खुरोगाबाधो। "अनुजानामि, भिक्खने, अञ्जनं–काळञ्जनं, रसञ्जनं, सोतञ्जनं, गेरुकं, कपल्ल"..... अनुजानामि, भिक्खवे, चन्दनं, तगरं, काळानुसारियं, तालीसं, भद्दमुत्तकं ति।

17. डेविड्स, टी0 डब्ल्यू0 रीज एण्ड ओल्डेनवर्ग, हर्मन, विनय टेक्स्ट्स पार्ट–II, द्रष्टव्य, मैक्समूलर एफ0, पूर्वोद्धत, पृ0 51–53; विनयपिटके महावग्गपालि, पूर्वोद्धत, पृ0 221 : भिक्खू उच्चावचा अञ्जनियो धारेन्ति– सोवण्णमयं, रूपियमयं। मनुस्सा उज्झायन्ति खिय्यन्ति विपाचेन्ति– सेय्यथापि गिही कामभोगिनो ति। भगवतो एतमत्थं आरोचेसुं। न, भिक्खवे, उच्चावचा अञ्जनियो धारेतब्बा। यो धारेय्य, आपत्ति दुक्कटस्य। अनुजानामि, भिक्खवे, अट्ठिमयं, दन्तमयं, विसाणमयं, नळमयं, वेळुमयं, कट्ठमयं, जतुमयं, फलमयं, लोहमयं, सङ्खनाभिमयं ति।.....

18. उपरिलिखित।

19. डेविड्स, टी0 डब्ल्यू0 रीज एण्ड ओल्डेनवर्ग, हर्मन, विनय टेक्स्ट्स पार्ट–II, द्रष्टव्य, मैक्समूलर एफ0, पूर्वोद्धत, पृ0 53–55; विनयपिटके महावग्गपालि, पूर्वोद्धत, पृ0 222–223 : तेन खो पन समयेन आयस्मतो पिलिन्दवच्छस्स सीसाभितापो होति। भगवतो एतमत्थं आरोचेसुं। अनुजानामि, भिक्खवे मुद्धानि तेलकं ति। नक्खमनीयोहोति। भगवतो एतमत्थं आरोचेसुं। अनुजानामि, भिक्खवे, नत्थुकम्मं ति। नत्थु गलति। भगवतो एतमत्थं आरोचेसुं। अनुजानामि, भिक्खवे, नत्थुकरिणं ति। भिक्खु उच्चावचा नत्थुकरिणयो धारेन्ति सोवण्णमयं रुपियमयं। मनुषा उच्झायन्ति खिय्यन्ति विपाचेन्ति–सेय्यथापि गिही कामभोगिनो ति। भगवतो एतमत्थं आरोचेसुं। न, भिक्खवे, उच्चावचा नत्थुकरणी धारेतब्बा। यो धारेय्य, आपत्ति दुक्कटस्य। अनुजानामि, भिक्खवे, अट्ठिमयं.....पे.... सङ्खानाभिमयं ति। नत्थुं विसमं आसिञ्जन्ति। भगवतो एतमत्थं आरोचेसुं। अनुजानामि भिक्खवे, यमकनत्थुकरिणं ति। नक्खमनीयो होति। भगवतो एतमत्थं आरोचेसुं। अनुजानामि, भिक्खवे, धूमं पातुं ति। तञ्ञेव वट्टिं आलिम्पेत्वा पिवन्ति, कण्ठो दहति। भगवतो एतमत्थं आरोचेसुं। अनुजानामि, भिक्खवे, धूमनेत्तं ति।.....

20. उपरिलिखित।

21. डेविड्स, टी0 डब्ल्यू0 रीज एण्ड ओल्डेनवर्ग, हर्मन, विनय टेक्स्ट्स पार्ट–II, द्रष्टव्य, मैक्समूलर एफ0, पूर्वोद्धत, पृ0 54–55, 128; विनयपिटके महावग्गपालि, पूर्वोद्धत, पृ0 223।

22. डेविड्स, टी0 डब्ल्यू0 रीज एण्ड ओल्डेनवर्ग, हर्मन, विनय टेक्स्ट्स पार्ट–II, द्रष्टव्य, मैक्समूलर एफ0, पूर्वोद्धत, पृ0 66–67; विनयपिटके महावग्गपालि, पूर्वोद्धत, पृ0 227–228।

23. उपरिलिखित।

24. डेविड्स, टी0 डब्ल्यू0 रीज एण्ड ओल्डेनवर्ग, हर्मन, विनय टेक्स्ट्स पार्ट–II, द्रष्टव्य, मैक्समूलर एफ0, पूर्वोद्धत, पृ0 55–56; विनयपिटके महावग्गपालि, पूर्वोद्धत, पृ0 223–224।

25. डेविड्स, टी0 डब्ल्यू0 रीज एण्ड ओल्डेनवर्ग, हर्मन, विनय टेक्स्ट्स पार्ट–II, द्रष्टव्य, एफ0 मैक्समूलर, पूर्वोद्धत, पृ0 56–57; विनयपिटके महावग्गपालि, पूर्वोद्धत, पृ0 223–224।
26. डेविड्स, टी0 डब्ल्यू0 रीज एण्ड ओल्डेनवर्ग, हर्मन, विनय टेक्स्ट्स पार्ट–II, द्रष्टव्य, एफ0 मैक्समूलर, पूर्वोद्धत, पृ0 68; विनयपिटके महावग्गपालि, पूर्वोद्धत, पृ0 228 : तेन खो पन समयेन अञ्ञतरस्स भिक्खुनो उदरवातबाधो होति। सो लोणसोवीरकं अपायि। तस्स सो उदरवाताबाधो पटिप्पस्सम्भि। भगवतो एतमत्थं आरोचेसुं। अनुजानामि, भिक्खवे, गिलानस्य लोणसोवीरकं; अगिलानस्य उदकसम्भिन्नं पानपरिभोगेन परिभुतिजतुं ति।
27. डेविड्स, टी0 डब्ल्यू0 रीज एण्ड ओल्डेनवर्ग, हर्मन, विनय टेक्स्ट्स पार्ट–II, द्रष्टव्य, मैक्समूलर एफ0, पूर्वोद्धत, पृ0 57; विनयपिटके महावग्गपालि, पूर्वोद्धत, पृ0 224।
28. डेविड्स, टी0 डब्ल्यू0 रीज एण्ड ओल्डेनवर्ग, हर्मन, विनय टेक्स्ट्स पार्ट–II, द्रष्टव्य, मैक्समूलर एफ0, पूर्वोद्धत, पृ0 58; विनयपिटके महावग्गपालि, पूर्वोद्धत, पृ0 224.
29. डेविड्स, टी0 डब्ल्यू0 रीज एण्ड ओल्डेनवर्ग हर्मन, विनय टेक्स्ट्स पार्ट–II, द्रष्टव्य, मैक्समूलर एफ0, पूर्वोद्धत, पृ0 59; विनय टेक्स्ट्स पार्ट–I, द्रष्टव्य, मैक्समूलर एफ0, पूर्वोद्धत, वाल्यूम–13, पृ0 74; विनयपिटके महावग्गपालि, पूर्वोद्धत, पृ0 224।
30. डेविड्स टी0 डब्ल्यू0 रीज एण्ड ओल्डेनवर्ग, हर्मन, विनय टेक्स्ट्स पार्ट–II, द्रष्टव्य, मैक्समूलर एफ0, पूर्वोद्धत, पृ0 60; विनयपिटके महावग्गपालि, पूर्वोद्धत, पृ0 225 : तेन खो पन समयेन अञ्ञतरस्स भिक्खुनो घरदिन्नकाबाधो होति। भगवतो एतमत्थं आरोचेसुं। अनुजानामि, भिक्खवे, सीतालोळिं पायेतुं ति।
31. उपरिलिखित : तेन खो पन समयेन अञ्ञतरस्स भिक्खुनो पाण्डुरोगबाधो होति। भगवतो एतमत्थं आरोचेसुं। अनुजानामि, भिक्खवे, मुत्तहरीतकं पायेतुं ति। अञ्ञतरस्स भिक्खुनो, छविदोसाबाधो होति। भगवतो एतमत्थं आरोचेसुं। अनुजानामि, भिक्खवे, गन्धालेपं कातुं ति।
32. उपरिलिखित : तेन खो पन समयेन अञ्ञतरो भिक्खु अभिसन्नकायो होति। भगवतो एतमत्थं आरोचेसुं। अनुजानामि, भिक्खवे, विरेचनं पातुं ति। अच्छकञ्जिया अत्थो होति.....।
33. डेविड्स, टी0 डब्ल्यू0 रीज एण्ड ओल्डेनवर्ग, हर्मन, विनय टेक्स्ट्स पार्ट–II, द्रष्टव्य, मैक्समूलर एफ0, पूर्वोद्धत, पृ0 61।
34. उपरिलिखित, पृ0 80–85; विनयपिटके महावग्गपालि, पूर्वोद्धत, पृ0 234–235।
35. उपरिलिखित।
36. डेविड्स, टी0 डब्ल्यू0 रीज एण्ड ओल्डेनवर्ग, हर्मन, विनय टेक्स्ट्स पार्ट–II, द्रष्टव्य, मैक्समूलर एफ0, पूर्वोद्धत, पृ0 86; विनयपिटके महावग्गपालि, पूर्वोद्धत, पृ0 236।
37. डेविड्स, टी0 डब्ल्यू0 रीज एण्ड ओल्डेनवर्ग, हर्मन, विनय टेक्स्ट्स पार्ट–II, द्रष्टव्य, मैक्समूलर एफ0, पूर्वोद्धत, पृ0 68–71।
38. उपरिलिखित।
39. उपरिलिखित, पृ0 72, 78; विनयपिटके महावग्गपालि, पूर्वोद्धत, पृ0 230 : तेन खो पन समयेन सम्बहुला भिक्खू कासीसु वस्सं वुत्था राजगहं गच्छन्ता भगावन्तं दस्सनाय अन्तरामग्गे न लभिंसु लूखस्स वा पणीतस्स व भोजनस्स यावदत्थं पारिपूरिं; बहुं च फलखादनीयं अहोसि; कप्पियकारको च न अहोसि।..... "कच्चि, भिक्खवे, खमनीयं, कच्चि यापनीयं, कच्चित्थ अप्पकिलमथेन अद्धानं आगता; कुतो च तुम्हे, भिक्खवे, आगच्छथा" ति ? खमनीयं भगवा, यापनीयं भगवा। इध मयं, भन्ते, कासीसु वस्सं वुत्था राजगहं आगच्छन्ता भगवन्तं दस्सनाय अन्तरामग्गे न लभिम्हा लूखस्स वा पणीतस्स वा भोजनस्स यावदत्थं पारिपूरि; बहुं च फलखादनीयं अहोसि;.... "अनुजानामि, भिक्खवे, यत्थ पस्सित्वा, भूमियं निक्खिपित्वा,..... ...अनुजानामि, भिक्खवे, उग्गहितपटिग्गहितं" ति।
40. उपरिलिखित।
41. डेविड्स, टी0 डब्ल्यू0 रीज एण्ड ओल्डेनवर्ग, हर्मन, विनय टेक्स्ट्स पार्ट–II, द्रष्टव्य, मैक्समूलर एफ0, पूर्वोद्धत, पृ0 76–77; विनयपिटके महावग्गपालि, पूर्वोद्धत, पृ0 232।
42. उपरिलिखित।
43. डेविड्स, टी0 डब्ल्यू0 रीज एण्ड ओल्डेनवर्ग, हर्मन, विनय टेक्स्ट्स पार्ट–II, द्रष्टव्य, मैक्समूलर एफ0, पूर्वोद्धत, पृ0 78–80; विनयपिटके महावग्गपालि, पूर्वोद्धत, पृ0 233।
44. उपरिलिखित।
45. डेविड्स, टी0 डब्ल्यू0 रीज एण्ड ओल्डेनवर्ग, हर्मन, विनय टेक्स्ट्स पार्ट–II, द्रष्टव्य, एफ0 मैक्समूलर, पूर्वोद्धत, पृ0 87–89; विनयपिटके महावग्गपालि, पूर्वोद्धत, पृ0 238 : यो सञ्ञतानं परदत्तभोजिनं कालेन सक्कच्चं ददाति यागुं। दसस्स ठानानि अनुप्पवेच्छति आयुं च वण्णं च सुखं बलं च।। पटिभानमस्स उपजायते ततो खुदं पिपासं च ब्यपनेति वातं। सोधेति वत्थिं परिणामेति भुत्तं। भेसज्जमेतं सुगतेन वण्णितं।। तस्मा हि यागुं अलमेव दातुं निच्चं मनुस्सेन सुखत्थिकेन। दिब्बानि वा पत्थयता सुखानि। मनुस्ससोभग्यतमिच्छाता वा ति।।.....
46. उपरिलिखित।
47. डेविड्स, टी0 डब्ल्यू0 रीज एण्ड ओल्डेनवर्ग, हर्मन, विनय टेक्स्ट्स पार्ट–II, द्रष्टव्य, मैक्समूलर एफ0, पूर्वोद्धत, पृ0 97; विनयपिटके महावग्गपालि, पूर्वोद्धत, पृ0 242 : भगवतो एतमत्थं आरोचेसुं। अनुजानामि, भिक्खवे, गिलानस्य गुळं अगिलानस्स गुळोदकं ति।

48. महावग्ग अट्ठकथा(1998), विपस्सना रिसर्च इंस्टीट्यूट, इगतपुरी, पृ0 276, द्रष्टव्य, तालिम मीना(2009), साइंस ऑफ् मेडिसन एण्ड सर्जरी इन बुद्धिष्ट इण्डिया, प्रथम प्रकाशन, बुद्धिष्ट वर्ड प्रेस, दिल्ली, पृ0 6।
49. हिल, ए0 एफ0(2000) 'हिल्स' इकोनॉमिक बॉटनी, नई दिल्ली, पृ0 448।
50. उपरिलिखित।
51. महावग्ग अट्ठकथा, पूर्वोद्धत, पृ0 276, द्रष्टव्य, तालिम मीना, साइंस ऑफ् मेडिसिन एण्ड सर्जरी इन बुद्धिष्ट इण्डिया, पूर्वोद्धत, पृ0 6।
52. हॉनर, आई0 बी0(2002) बुक ऑफ् डिसिप्लिन, खण्ड–5, पालि टेक्स्ट्स सोसायटी, लंदन, पृ0 272।
53. कर्न एच0(1896) मैनुवल ऑफ् इण्डियन बुद्धिज्म, स्ट्रासबर्ग, पृ0 67।
54. व्याधिसूत्र, द्रष्टव्य, गोयल श्री राम(1984) ए रिलीजियस हिस्ट्री ऑफ् एंशियन्ट इण्डिया ( अप टू सी0 1200 ए0डी0), खण्ड–1, कुसुमाञ्जलि प्रकाशन, मेरठ, पृ0 229।